ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-11* February- 2019
Anthology : The Research

स्वामी विवेकानन्द – शैक्षिक विचार

नीलम श्रीवास्तव
सहायक प्रोफेसर,
शिक्षक शिक्षा विभाग,
डी0बी0एस0 कालेज,
कानपुर

सारांश

अमूल्य रत्नों से परिपूर्ण जाज्वल्यमान भारत वसुन्धरा का अंचल कितना पवित्र, कितना सौभाग्यशाली और अनोखा है यह किसी से छिपा नहीं है। यह रत्नगर्भा भारतभूमि अपने अन्तस में जहाँ असंख्य मणि–मुक्ताऐं छिपाए बैठी है वहीं उसके अंचल में समय–समय पर ऐसे नवरत्न पैदा हुए हैं जिनकी जीवन–ज्योति से जगतीताल जगमगा उठा, जिन्होंने चट्टान बनकर समय का प्रवाह रोक दिया, जो अपने लिये नहीं वरन् विश्व के लिए जिए और जिनके पवित्र तेज के समक्ष समस्त अमानवीय एवं अपावन विचारों ने घुटने टेक दिये। माँ भारती के ये अमर पुत्र अपने पूर्वजों की विरासत सभाल, अतीत का ज्योति–कलश ले, साधना के पथ पर बढ़े, तो पथ की बीहड़ता, उसका अंधकार सब कुछ स्वयमेव नष्ट हो गया। मंजिल आरती लिए स्वागत में खड़ी मिली। उनका जीवन आज भी सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचकर वह ज्ञान–ज्योति बिखेर रहा है जिसके प्रकाश पर संसार सब कुछ न्यौछावर करने को सन्नद्ध है। ऐसे विलक्षण पुरूष भारत में एक दो नहीं हुए। इनकी एक विशाल मालिका है। इस द्विव्य मालिका के एक ज्योतिर्मान रत्न है– स्वामी विवेकानन्द।

मुख्य शब्द : स्वामी विवेकानन्द।

प्रस्तावना

स्वामी विवेकानन्द ने भारत की जनता को अनुद्योग, आलस्य, अकर्मण्यता के स्थान पर उद्योग, परिश्रम और कर्मण्यता का पाठ पढ़ाया। धार्मिक कृत्यों में प्राचीन विचारधारा के स्थान पर तथा आडम्बर पूर्ण अर्चना के स्थान पर नवीन मानसिक पूजा को महत्व दिया। रूढ़िवाद की पुरातन छिन्न–भिन्न श्रृंखलाओं को नष्ट करके जनता को धर्म के मूल तत्वों को समझाया। इन्होंने जातिवाद और वैषम्यवाद की विचार धाराओं को समाज से जड़ सहित उखाड़ फेकने का, सबल प्रयत्न किया। इन सबके अतिरिक्त देश की स्वतंत्रता के महान उदघोषकों में भी विवेकानन्द का नाम अग्रगण्य है। देश की राजनीतिक चेतना के साथ–साथ शैक्षिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक भावनाओं के विकास में अपना बलिष्ठ कंधा लगाने वालों में विवेकानन्द का नाम विशेष रूप से स्मरणीय है।

जीवन–दर्शन

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक–दर्शन पर दृष्टिपात करने से पूर्व यह आवश्यक है कि उनके जीवन–दर्शन पर सम्यक दृष्टि डाली जाय क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का आदर्श ही उसके विचारों पर प्रभाव डालता है और उसके शिक्षा दर्शन के पीछे भी उनके जीवन–दर्शन का हाथ होता है। विवेकानन्द भी इस नियम के अपवाद नहीं है क्योंकि जीवन–दर्शन एक निश्चित विश्वास पर आधारित होता है। यदि विश्वास सजीव एवं जीवनोपयोगी है तो शैक्षिक क्षेत्र में उसका प्रभाव अवश्यमेव पड़ता है।

इस प्रकार दर्शन अपने विस्तृत अर्थ में अदृश्य आधार है जिसकी छाप शिक्षा पर अवश्वमेव पड़ती है। विवेकानन्द एक ऐसे ही महापुरूष थे जिनका जीवन–दर्शन भी उच्च–कोटि के वेदान्त सिद्धान्त पर आधारित था। प्रारम्भ से ही उनके मन में आध्यात्म के प्रति चेतना जाग्रत थी। स्वामी जी का जीवन स्वयं की प्रेरणा से परिपूर्ण था। उनके प्रेरणा का सम्पूर्ण रहस्य उनके वेदान्त में निहित है। उन तात्विक सत्यों में निहित है जिन्हें उन्होंने अपनी साधना, अध्ययन, चिन्तन व शुद्ध श्रद्धा से प्राप्त किया। उन्होंने वेदान्त का साधारण अर्थ यह

बताया कि वेदों का अन्त अथवा वेदों का सूक्ष्म सार तत्व या तत्व है– ''ईश्वर, आत्मा, सृष्टि का ज्ञान।'' स्वामी जी का जीवन–दर्शन भी पूर्णतः इन्हीं से प्रेरित रहा। इनका विचार था कि मनुष्य प्रत्येक समय ध्यान मग्न होकर ब्रह्मज्ञान में लीन नहीं हो सकता। अतः सभी प्राणियों में ब्रह्मदर्शन करना चाहिये। उन्होंने अपने जीवन–दर्शन में ज्ञान को प्राथमिकता दी है। उन्हीं के शब्दों में – ''जो कुछ भी पूर्णता के लिये होता है, वहीं सत्य है।''

इन्होंने अपने जीवन में किसी भी प्रकार की संकुचित भावना को स्थान नहीं दिया। अपने एक व्याख्यान में स्वामी जी ने कहा था– ''जब हम दर्शन का अध्ययन करते है तब हमें यह ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण विश्व एक है। समस्त विश्व यहाँ से वहाँ तक एक है, बात इतनी है कि अलग 2 दृष्टिकोण से देखे जाने के कारण वह विभिन्न प्रतीत होता है। उन्होंने अपने जीवन–दर्शन का आधार वेदान्त के सिद्धान्तों तथा आदर्शों को बनाया व उसी के अनुसार निर्मित किया।

स्पष्ट है कि स्वामी जी के जीवन–दर्शन के आलोक का प्रसार मात्र सैद्धान्तिक नहीं था, अपितु वह व्यावहारिक भी था। इन्होंने उन सिद्धान्तों को अपने जीवन में अवतरित तथा प्रयुक्त भी किया। वे अपने व्यक्तिगत जीवन से ऊपर उठकर आकाश की असीम ऊँचाईयों का स्पर्श करते हुए स्वयं एक संस्था बन गये और न केवल अपने देश की सीमाओं में बंधे रहे, अपितु उनका संदेश, उनका प्रयास समस्त मानवता के लिये श्रेयस्कर बन गया।

शिक्षा–दर्शन

जिस प्रकार विवेकानन्द का जीवन–दर्शन अत्यन्त विस्तृत और समन्वयवादी है इसी प्रकार उनका शिक्षा–दर्शन भी। उन्होंने वेदान्त को आधार बना अपना शिक्षा दर्शन जनता के सम्मुख रखा। उनका शैक्षिक दर्शन जनता के लिये अमूल्य है। उनका शैक्षिक दर्शन आदर्शवादी होने के साथ–साथ अपने में यथार्थवाद और प्रकृतिवाद को समेटे हुए है। उन्होंने वेदान्त को व्यावहारिकता की छाप दी है। सामान्य लोगों की यह धारणा है कि उनके शैक्षिक विचार मात्र बुद्धिवादियों के मस्तिष्क के चाहरदीवारियों तक सीमित हैं लेकिन यह उनकी संकीर्णता का परिचायक है। उनका शैक्षिक दर्शन मानव के सर्वांगीण जीवन गठन में अनुपम शक्ति प्रदान करता है। वे सच्चे अर्थों में भारतीय थे इसीलिए उन्होंने भारतीय शिक्षा को भारतीय–दर्शन पर आधारित करने की बात कहीं।

स्वामी जी ने आधुनिक शिक्षा की दिनो–दिन गिरती हुई स्थिति को देखते हुए अपने शैक्षिक विचारों के आधार पर शिक्षा–प्रणाली में आमूल परिवर्तन करना चाहा। उन्होंने एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा संस्था स्थापित करने का संकल्प लिया जिस पर विदेशी चिन्तन और संस्कृति का प्रभाव न हो। छात्र पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान तो सीखे परन्तु उनकी सांस्कृतिक चेतन मूलतः भारतीय ही रहे। उनके शैक्षिक–दर्शन का मुख्य ध्येय व्यक्ति को क्रमशः ब्राह्मणत्व में परिवर्तित करना था। उच्च वर्ग की शिक्षा व सदाचार जिस पर कि उनका तेज और गौरव निर्भर है, वह अछूतों तथा वनवासियों को भी मिले, यही उनके शैक्षिक–दर्शन का मूल–मंत्र था।

आज जबकि व्यक्ति भौतिकता को अपने में समेटने को दुःसाहस कर रहा है, भौतिकता की आंधी व्यक्ति को आध्यात्मिकता से दूर ले जा रही है, सर्वत्र पाश्चात्य सभ्यता का बोल बाला है, ऐसी स्थिति में स्वामी जी के शैक्षिक विचार स्वतः सिद्ध है क्योंकि उनके शैक्षिक विचारों में आध्यात्मिकता का सुन्दर समन्वय है जो आज के युग की मांग है।

विवेकानन्द के शैक्षिक विचार

शिक्षा का अभिप्राय

स्वामी जी पूर्ण रूपेण वेदान्ती थे इसलिये इनका शिक्षा सम्बन्धी दृष्टिकोण, वेदान्त दर्शन से प्राप्त किया गया है। इनके अनुसार विभिन्न उपाधियों को एकत्रित करके, मात्र दूसरों के विचारों को सैद्धान्तिक तौर पर रटकर कोई व्यक्ति अपने को शिक्षित नहीं कहला सकता। क्या यही शिक्षा है जो मनुष्य को जीवन संग्राम के लिये तैयार नहीं करती, उनके चरित्र के विकास में सहयोग नहीं देती, उनमें प्रेम, दया आदि की भावना का समावेश नहीं करती, वह शिक्षा नहीं कही जा सकती। फिर शिक्षा कैसी हो? शिक्षा का क्या अर्थ हो?

उन्होंने शिक्षा का व्यापक एवं व्यावहारिक अर्थ लिया है। उन्होंने शिक्षा को एक ऐसा ज्ञान माना है जिससे व्यक्ति को अपना शारीरिक, मानसिक व आत्मिक विकास करने में सहयोग मिलता है। उन्होंने शिक्षा का व्यापक एवं व्यावहारिक अर्थ लिया है। उन्होंने शिक्षा को एक ऐसा ज्ञान माना है जिससे व्यक्ति को अपना शारीरिक, मानसिक व आत्मिक विकास करने में सहयोग मिलता है। उन्होंने स्पष्ट रूप में कहा है–

''क्या शिक्षा पुस्तकीय ज्ञान से होती है अथवा यह विविध विषयों का ज्ञान है? नहीं?'' शिक्षा विविध जानकारियों का ढेर नहीं है जो सबके मस्तिष्क में ठूँस दिया जाये, हमें उन विचारों को अनुभूत कर लेने की आवश्यकता है जो जीवन–निर्माण, मनुष्य निर्माण व चरित्र निर्माण में सहायक है।

निश्चित रूप से उनका प्रयोजन उसी शिक्षा से था जिसके द्वारा चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और साथ ही साथ मनुष्य स्वावलम्बी हो। आवश्यकता इस बात की है कि सम्पूर्ण शिक्षा की आधार शिला को रखते हुए उसके पीछे मानव की पूर्णता व उसकी उन्नति का भाव रखना चाहिए। इस संदर्भ में

शिक्षा ज्ञानार्जन है लेकिन व्यर्थ और अपरिपक्वता से युक्त नहीं बल्कि जीवन में उपयोगी, जीवन में काम आने वाली, मनुष्य का निर्माण करने वाली तथा विचारों को आत्मसात करने वाली। इस प्रकार स्वामी जी के अनुसार शिक्षा ज्ञान संग्रह मात्र न होकर विकास हेतु ज्ञान का सदुपयोग है। शिक्षा मानव में पूर्व में ही उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में शिक्षा के अर्थ को परिभाषित किया है–

''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।''

स्वामी जी के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति लौकिक तथा आध्यात्मिक ज्ञान अपने में समाये रहता है। उसकी अभिव्यक्ति होने पर उसे पूर्णता का आभास होता है। उनका विश्वास था कि जब तक मनुष्य भौतिक दृष्टि से सुखी नहीं होता, तब तक ज्ञान, भक्ति और योग ये सब कल्पना की ही वस्तु है। इसीलिये इन्होंने कहा कि ''हमें पुस्तकीय शिक्षा नहीं चाहिये। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जो चरित्र गठन कर सके, मन का बल बढ़ा सके, बुद्धि को विकसित एवं परिष्कृत कर सके तथा मनुष्य को भावी जीवन के लिये स्वावलम्बी भी बना सके।''

इस प्रकार निश्चित रूप से उनकी शिक्षा के प्रति यह परिभाषा आधुनिक शिक्षाशास्त्रियों की भाँति सम्पूर्ण अर्थ को अपने में समेटे हुये है। उनकी शिक्षा सम्बन्धी परिभाषा की एक विशेषता यह भी है कि इसमें आध्यात्मिकता का भी समावेश है, जो आज के युग की मांग है। वे फ्रोबेल के मत से भी सहमत है कि शिक्षा स्वविकास है उनका मत यह है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति के अनुसार अपना विकास करता है। वे मनुष्य निर्माणकारी शिक्षा को आवश्यक मानते थे। उसी का नाम शिक्षा है जिस अभ्यास से मनुष्य की इच्छाशक्ति का प्रवाह और प्रकाश संयमित होकर फलदायी बन सके।

शिक्षा का उद्देश्य

वेदान्त के पूर्ण समर्थक स्वामी जी आदर्शवादी विचारक थे, चूँकि जीवन का आदर्श दर्शन होता है इसलिये उनके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के उद्देश्यों पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव है। इन्होंने प्रकृति व यर्थाथ को कभी नहीं ठुकराया। इनके अनुसार सर्वप्रथम मनुष्य का लक्ष्य दर्शन की सहायता से जीवन को ऐसा व्यवस्थित कर देना था कि अविद्या का नाश हो और सदगुणों की प्राप्ति हो। इनके द्वारा निर्धारित शिक्षा के उद्देश्यों को इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है–

विवेकानन्द द्वारा निर्धारित शिक्षा का पहला उद्देश्य ये है कि शिक्षा मनुष्य के अन्दर विद्यमान पूर्णता को प्रकट कर उसे समझने में सहायता देती है अर्थात शिक्षा आत्मा–परमात्मा इन दोनों में आपसी तारतम्य को स्थापित करने में सहयोग दें। इनके अनुसार शिक्षा का दूसरा उद्देश्य मानव सेवा एवं समाज सेवा है। वे अवगुणों को निरर्थक समझते हैं। वे गुणों के अभ्यास के लिये समाज व प्राणी सेवा को ही सर्वोत्तम समझते है क्योंकि 'प्राणी' ब्रह्ममय अंश है तथा 'यर्थाथ' शिक्षा का लक्ष्य इन्होंने मानव की सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना माना है। इन्होंने शिक्षा के सामाजिक लक्ष्य की ओर इंगित करते हुए स्पष्ट किया कि वास्तव में व्यक्ति के अन्दर छिपी हुई योग्यता एवं दिव्यता का प्रकाशन समाज में ही सम्भव होता है। व्यक्ति के विकास हेतु समाज व मानव का विकास जरूरी है और ये ही शिक्षा का उद्देश्य है।

शिक्षा का तीसरा उद्देश्य इन्होंने मानव–निर्माण तथा समाज–सेवा के साथ ही साथ धार्मिक शिक्षा को कहा। व्यक्ति में मनुष्यत्व को लाना धर्म का ही कार्य है क्योंकि मनुष्य जब जन्म लेता है तो वह पशुतुल्य होता है, धर्म ही उसे पशुत्व से अलग करता है। मनुस्मृति में कहा भी गया है–

''आहार, निद्रा, भय, मैथुन ..... समाना।''

अर्थात ''आहार, निद्रा, भय, मैथुन ये मनुष्यों में पशुओं के समान है।'' मनुष्यों को पशुओं से भिन्न बनाने वाला धर्म ही है। धर्म से हीन मनुष्य पशु के समान है। अब प्रश्न यह उठता है कि यह मनुष्यत्व क्या है? इसके उत्तर में वे कहते है कि व्यक्ति को लौकिक एवं अलौकिक सदगुणों को धारण करके ही द्विव्य पुरूष की श्रेणी मिलती है।

ये सद्गुण हैं– आत्मविश्वास, आत्मश्रद्धा, आत्मत्याग, आत्मनिर्भरता, मानव–प्रेम आदि। इन्हीं सदगुणों को प्राप्त करने के लिये स्वामी जी ने कहा है–

''उठो, जागो और तब तक न रूको जब तक चरम लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाये'' इसके परिणाम स्वरूप मनुष्य का शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक विकास सद्गुणों की प्राप्ति से भौतिक सुखों के साथ–साथ आध्यात्मिक आनन्द की भी तृप्ति महसूस करता है। इस प्रकार स्वामी जी शिक्षा के इस लक्ष्य को निर्धारित कर व्यक्ति का धार्मिक, नैतिक तथा चारित्रिक विकास चाहते थे।

शिक्षा के चौथे उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए स्वामी जी ने बताया कि व्यक्ति को सदैव 'बसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से प्रेरित रहना चाहिए। उनके अनुसार शिक्षा द्वारा सभी प्राणी समान रूप से पारस्परिक सभ्यता व संस्कृति का आदान–प्रदान करें व विश्व बन्धुत्व की भावना का विकास करें।

शिक्षा के पाँचवे उद्देश्य पर विचार करते हुए उन्होंने कहा कि शिक्षा शारीरिक विकास का माध्यम होनी चाहिए। स्वामी जी भौतिक जीवन की रक्षा और आध्यात्मिकता की अनुभूति करने के लिये आवश्यक ज्ञान, भक्ति और योग के लिये शरीर के महत्व को स्वीकार

करते थे और इसीलिये शिक्षा द्वारा मनुष्य के शारीरिक विकास की बात करते थे। उनके अनुसार दुर्बलता निश्चित रूप से पतन का कारण है।

स्वामी जी ने शिक्षा का छठा उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से सम्बन्धित बताया है। उन्होंने जीविकोपार्जन हेतु शिक्षा का उद्देश्य निश्चित किया। उन्होंने गरीबी को एक बहुत बड़ा अभिशाप माना है। उनका विश्वास था कि इसका अन्त व्यवसायिक शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। उन्होंने कहा कि शिक्षा द्वारा भौतिक सुख प्राप्त करके आध्यात्मिक विकास सम्भव है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति को कर्तव्यों का बोध कराकर आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सक्षम बना देना चाहिए ताकि वह दूसरों पर आश्रित न रह सके। इसके लिए उन्होंने कृषि एवं उद्योग शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने देश की जनता को भूखों मरते हुए देखा था। इसी से उनकी आत्मा कराह उठी। अतः शिक्षा का उद्देश्य निश्चित करते समय वे इसे नहीं भूलें।

सूक्ष्म अवलोकन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्वामी जी का शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण व्यावहारिक था। उनके अनुसार पुस्तकों का पढ़ना या रट लेना शिक्षा का उद्देश्य या लक्ष्य नहीं है। रटने वाला छात्र शारीरिक दृष्टि से क्षीण हो जाता है और व्यावहारिक दृष्टि से भी असफल ही होता जाता है। वहीं शिक्षा सफल है जो मनुष्य को यांत्रिक बनाना नहीं चाहती चूँकि मनुष्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है, इसलिये शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को व्यावहारिक बनाना होना चाहिए। एक ओर उसकी दिव्यता को प्रकाशित करना चाहिये तो दूसरी ओर उसे संसारिक दृष्टि से उपयोगी बनाना चाहिये, तभी शिक्षा भावी योजना में सफल होगी।

निःसन्देह स्वामी विवेकानन्द ने एक ऐसा शैक्षिक उद्देश्य निश्चित किया था जिसकी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बड़े जोरों से मांग है। इन्होंने भौतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा के उद्देश्यों को भली–भाँति ताल–मेल बैठाकर, शिक्षा को सही रूप में व्यवस्थित कर डूबते भारत को बचा लिया।

पाठ्यक्रम

शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर ही पाठ्यक्रम का निर्धारण होता है। यह सर्वविदित है कि स्वामी जी आध्यात्मिक शिक्षाशास्त्री रहे लेकिन उससे अधिक कहीं वे व्यवहारवादी थे। यह उनकी महत्ता है कि उन्होंने आध्यात्म एवं व्यवहार दोनों पक्षों पर समान रूप से बल दिया। वे शिक्षा द्वारा व्यक्ति को लौकिक एवं पारलौकिक दोनों जीवनों के लिये तैयार करना चाहते थे। उनके द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. लौकिक 2. आध्यात्मिक

दोनों ही प्रकार का पाठ्यक्रम अत्यन्त विस्तृत है जिसमें सभी जीवनोपयोगी विषयों का समावेश है। एक ओर लौकिक विषय जहाँ व्यक्ति को भौतिकता की ओर ले जाते हैं, वहीं आध्यात्मिक विषय आत्मानुभूति की पराकाष्ठा तक पहुँचाते हैं।

इनके अनुसार पाठ्यक्रम सदैव परिवर्तनशील होना चाहिए। पाठ्यक्रम में विद्यार्थी की आवश्यकता सर्वोपरि होनी चाहिये और तद्नुसार शिक्षा में परिवर्तन होना चाहिये। पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बालक को सदैव आगे बढ़ने की प्रेरणा देता हो। पाठ्यक्रम को सदा उच्च नैतिकता एवं उदात्त आदर्शों से युक्त होना चाहिये। पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसके द्वारा ह्रदय को सुसंस्कृत बनाने की प्रेरणा मिले। पाठ्यक्रम में अतीत, वर्तमान और भविष्य किसी की भी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए।

सर्वप्रथम इन्होंने अपनी शिक्षा–व्यवस्था में वेदों को महत्वपूर्ण स्थान दिया। अतः वेदों का अध्ययन भी पाठयक्रम के अन्तर्गत रखा। इन्होंने वैदिक मंत्रों की मेघगर्जना द्वारा भारत में नवजीवन का संचार करने के लिये कहा। इनके अनुसार पाठ्यक्रम में ऐसी बाते पढ़ानी है जिससे छात्रों में प्रबल शक्ति का संचार हो।

स्वामी जी के अनुसार विद्यालय में किसी मत या सम्प्रदाय की शिक्षा न देकर सभी धर्मों के सारभूत तत्वों की जानकारी दी जानी चाहिए। स्पष्ट है कि वो आडम्बर से दूर धार्मिक शिक्षा का समर्थन करते हैं।

इन्होंने उपनिषदों को भी जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग माना है। इनके अनुसार उपनिषदों का अध्ययन भी महत्वपूर्ण है। उपनिषद शक्ति की विशाल खान है। इसमें सत्य की स्थापना हुई है। उपनिषदों के सत्य महान है। जो सत्य महान होता है, वह सहज भी होता है। स्वामी जी के शब्दों में ''उपनिषदों में ऐसी प्रचुर शक्ति विद्यमान है जिससे समस्त संसार तेजस्वी हो सकता है, समस्त संसार पुर्नजीवित एवं शक्ति सम्पन्न हो सकता है। वे तो समस्त जातियों को सभी भिन्न–भिन्न सम्प्रदाय के दुर्बल, दुःखी और पददलित लोगों को उच्च स्वर से स्वयं को अपने पैरों पर खड़े होने और मुक्त हो जाने के लिये कहते हैं। 'मुक्ति' अथवा 'स्वाधीनता' (दैहिक, मानसिक, आध्यात्मिक) यही उपनिषदों का मूलमंत्र है।'' स्पष्ट है कि इन्होंने पाठ्यक्रम में उपनिषदों के सारतत्व के समन्वय पर भी बल दिया।

पाठ्यक्रम में शारीरिक प्रशिक्षण का भी महत्वपूर्ण स्थान है। शारीरिक दुर्बलता, हमारे दुःखों का महत्वपूर्ण कारण है। इसके कारण हम आलसी बन जाते हैं मिलकर काम नहीं कर सकते, आचरण में प्रत्येक विचार को उतार नहीं पाते। नवयुवकों को बलवान बनाने के लिये शारीरिक प्रशिक्षण को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया। शारीरिक प्रशिक्षण के अन्तर्गत खेलकूद की अवहेलना नहीं की

गयी। अतः खेलकूद का भी अभ्यास होना आवश्यक है। पाठ्यक्रम में भाषा और साहित्य को भी स्थान दिया गया। साथ ही साथ पाठ्यक्रम में काव्य और कला का भी समावेश किया गया। इनके अनुसार विदेशी भाषा की अपेक्षा स्वदेशी भाषा पर पहले अधिकार होना चाहिये क्योंकि स्वदेशी भाषा का अपने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है।

दैनिक जीवन में तैयारी के लिये वे पाठ्यक्रम में संस्कृत, मातृभाषा, अंग्रेजी, विज्ञान, मनोविज्ञान, गृहविज्ञान, राजनीति शास्त्र, उद्योग कौशल, संगीत शिक्षा, कृषि शिक्षा, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, व्यायाम, खेलकूद, समाजसेवा कार्य और राष्ट्र सेवा से सम्बन्धित विषयों को स्थान प्रदान करते हैं और पारलौकिक अर्थात आध्यात्मिकता की प्राप्ति के लिये धर्म, दर्शन, भजन, कीर्तन, साधु, संगीत, उपदेश, श्रवण–मनन और ध्यान के महत्व को स्वीकार करते है। इस प्रकार निश्चित रूप से लौकिक विषयों में भौतिक समृद्धि एवं आध्यात्मिक में आत्म विकास तथा आत्मानुभूति से सम्बन्धित विषयों को मान्यता प्रदान की गयी।

अवश्यमेव स्वामी जी द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम व्यक्ति को दोनों ही रूपों (लौकिक एवं पारलौकिक) में परिष्कृत एवं सुसमृद्ध बनायेगा।

जन–साधारण की शिक्षा

जन–साधारण के प्रति स्वामी जी का अपार स्नेह था। गरीबों की दशा देखकर उनका हृदय विदीर्ण हो उठा उन्होने जन–साधारण की शिक्षा पर विचार करते हुए कहा था– ''सर्व सामान्य शिक्षा ही उत्तम चरित्रों का निर्माण करके, जनसाधारण की ऊँच–नीच की खाई को पाट सकती है व देश की उन्नति में अहं भूमिका निभा सकती है।''

अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु ही उन्होंने जन–साधारण की शिक्षा का प्रचार किया व उसे अपने शिक्षा सम्बन्धी विचारों में व्यापक स्थान दिया। उनके अनुसार देश उसी अनुपात में उन्नति करता है जिस अनुपात में वहाँ के जन–साधारण में शिक्षा और बुद्धि का प्रसार होता है। भारत वर्ष की पतनावस्था का मुख्य कारण यह रहा है कि मुट्ठी भर लोगों ने देश की सम्पूर्ण शिक्षा और बुद्धि पर एकाधिपत्य कर लिया। यदि पुनः उन्नति चाहते हैं तो जन–साधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार करना होगा।

स्वामी जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि हमारा राष्ट्र झोपड़ियों में बसता है। वर्तमान समय में सबका यह कर्तव्य है कि देश के एक भाग से दूसरे भाग में जाए और गांव–गांव जाकर लोगों को समझाए कि अब आलस्य के साथ बैठे रहने से काम नहीं चलेगा। उन्हें उनकी यर्थाथ अवस्था का परिचय कराया जाय और कहा जाय कि– ''उठो शिक्षित हो और अन्य लोगों को शिक्षित करो।'' उन्हें उनकी अवस्था सुधारने की सलाह दो और शास्त्रों की बातों को विशद रूप से सरलतापूर्वक समझाते हुए उदात्त सत्यों का ज्ञान कराओ। उनके मन में भी यह बात बिठा देनी चाहिए कि ब्राह्मण के समान उन सबका भी धर्म और शिक्षा पर पूरा अधिकार है। सभी को इन्हीं जाज्वल्यमान मंत्रों का उपदेश दो। सदियों से ऊँची जाति वाले राजाओं और विदेशियों के असंख्य अत्याचारों ने उनकी सारी शक्तियों को नष्ट कर दिया है और अब शक्ति प्राप्त करने का पहला उपाय है– जन–साधारण में 'उपनिषदों का प्रसार'। उन्हें यह बताना कि– ''मैं आत्मा हूँ, मुझे तलवार काट नहीं सकती, शस्त्र छेद नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती, वायु सुखा नहीं सकती।

उनके अनुसार शास्त्र, ग्रन्थों में आध्यात्मिकता के जो रत्न मौजूद है और जो कुछ मठों और अरण्यों में छिपे हैं उन्हें निकालना है तथा जन–साधारण तक पहुँचाना है। जन–साधारण को शिक्षा उनकी निजी भाषा में देनी होगी। उन्हें संस्कृति का दर्पण दिखाकर ही प्रकाशरूपी चेहरा प्राप्त किया जा सकता है। उन्हें संस्कृत शिक्षा भी दी जानी चाहिये क्योंकि संस्कृत शब्दों की ध्वनि मात्र से ही हमारी जाति को बल, प्रतिष्ठा एवं शक्ति प्राप्त होती है।

स्वामी जी के अनुसार जनसाधारण को व्यावहारिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए। उन्हें सरल शब्दों में जीवन के लिये आवश्यक विषयों तथा वाणिज्य और कृषि आदि की शिक्षा दी जानी चाहिये।

अन्ततोगत्वा यह कहा जा सकता है कि स्वामी जी जनसाधारण की शिक्षा के अत्यधिक समर्थक थे। जन–साधारण की शिक्षा के प्रति उनके उत्कृष्ट विचार तथा उनके द्वारा किये गये अथक प्रयास उन्हे भारत के उज्जवल भविष्य के निर्माता के रूप में ला खड़ा करते हैं। उनका विचार था कि सामाजिक सुधार या विकास के लिये इस शिक्षा का प्रचार देश में सर्वत्र होना आवश्यक है। यदि सर्वसाधारण में पिछड़ापन, अशिक्षा, अज्ञानता रह गयी तो समाज कभी भी विकसित नहीं बन सकता। उन्होंने अपने महत्वपूर्ण विचारों द्वारा समाज के सभ्य लोगों एवं सरकार को जन–साधारण की शिक्षा के लिये उत्साहित कर राष्ट्र को अवनति के गर्त में जाने से बचा लिया। उन्होंने शिकागों में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था–

''भारत के सभी अनर्थों की जड़ जनसाधारण की अशिक्षा है। मेरी समझ में जब तक भारत की जनता उत्तम रूप से शिक्षित नहीं होगी तब तक देश का पुनरूद्धार सम्भव नहीं होगा। चाहे जितने भी राजनीतिक आंदोलन क्यों न हो, कोई लाभ न होगा। यदि हम भारत का पुनरूद्धार करना चाहते हैं तो हमें अवश्य ही जनसाधारण को शिक्षित करना होगा।''

स्त्री–शिक्षा

वास्तव में यदि गम्भीरता से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि भारत के पतन और अवनति का एक प्रमुख कारण स्त्रियों की अशिक्षा है। स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार दिलाने में स्वामी विवेकानन्द का नाम अग्रगण्य है। जिस समय भारत में महिला शिक्षा को धर्माचार्यों द्वारा सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था, उससमय उन्होंने इस विषय में कहा था–

''कौन से शास्त्र हैं जिसमें आपको लिखा मिलेगा कि नारी ज्ञान एवं भक्ति के लायक नहीं है? पतन के दौर में जब धर्माचार्यों ने दूसरी जातियों को वेद पढ़ने के लिये अक्षम घोषित किया, तभी महिलाओं को भी उनके अधिकारों से वंचित कर दिया गया। नहीं तो आप पायेंगे कि वैदिक और उपनिषद काल में मैत्रेयी एवं गार्गी जैसी विदुषी स्त्रियों ने ऋषि–मुनियों के बराबर स्थान प्राप्त किया था। एक हजार ब्राह्मणों की उपस्थिति में गार्गी ने बड़े साहस के साथ याज्ञवल्क्य को ब्रह्मज्ञान के ऊपर शास्त्रार्थ की चुनौती दी थी। स्त्रियाँ यदि उस समय ज्ञान एवं शास्त्रार्थ की अधिकारी थी तो आज के समय में उन्हें यह अधिकार क्यों न मिलें।''

स्वामी जी के अनुसार ''स्त्री शक्ति स्वरूपा है, वह रूप से साक्षात् लक्ष्मी है, गुणों से सरस्वती है, वह साक्षात जगदम्बा है। सम्पूर्ण समाज की धात्री भारतीय नारी हृदय से कार्य करेगी और अपने साथ ही समाज की भी उन्नति करेगी।'' इन्होंने कहा कि प्रत्येक हिन्दू को चाहिये कि वह अपने समस्त ज्ञान को स्त्री और पुरूष में समान रूप से वितरित करें। यह समझना अत्यन्त कठिन है कि इस देश में स्त्रियों और पुरूषों के बीच इतना भेद क्यों रक्खा गया जबकि वेदान्त की घोषणा है कि सभी प्राणियों में वही एक आत्मा विराजमान है तो स्त्रियों को शिक्षित करने में इतना भेद क्यों? उनका अडिग विश्वास था कि प्रत्येक राष्ट्र को स्त्री जाति का सम्मान करते हुए उन्हें शिक्षित किया जाना चाहिए। स्वामी जी का कथन था कि ''पुत्रियों का लालन–पालन और शिक्षा उतनी ही सावधानी और तत्परता से होनी चाहिए जितनी पुत्रों की।'' पुत्रियों को भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

स्त्रियों को ऐसी शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए कि वे अपनी समस्याओं को अपने तरीके से हल कर सके क्योंकि भारतीय स्त्रियाँ भी इस कार्य में संसार की अन्य स्त्रियों के ही समान दक्ष हैं।

स्त्री शिक्षा पर अपने विचार प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि स्त्री शिक्षा का विस्तार धर्म को केन्द्र बनाकर करना चाहिये। धर्म के अतिरिक्त दूसरी शिक्षाए गौण हैं। वे स्त्रियों को धार्मिक शिक्षा देने के साथ–साथ शिल्प, विज्ञान, गृहकार्य, स्वास्थ्य, गृहविज्ञान आदि की शिक्षा देने के पक्ष में थे। जिससे स्त्रियाँ सामाजिक दायित्वों की पूर्ति हेतु उत्कंठित रहे तथा सीता, सावित्री आदि के पदचिह्नों पर चलकर सात्विकता तथा कर्तव्यनिष्ठा का परिचय देती रहे। उनके अनुसार आज स्त्रियों में श्रद्धा आत्मविश्वास, आत्मबल जगाने का एक मात्र उपाय केवल यही है कि प्रत्येक स्त्री सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत हो। स्त्रियां शिक्षित होगीं तो स्वयं ही अपने हानि या लाभ का चयन कर कुरीतियों को बाहर निकाल फेकेंगी।

स्वामी जी ने स्त्रियों के लिये पुस्तकीय ज्ञान का अधिकाधिक समर्थन नहीं किया। पुस्तकीय ज्ञान का आंशिक समर्थन कर व्यावहारिक तथा चारित्रिक शिक्षा को ही उन्होंने उपयोगी बताया। उन्होंने स्त्री शिक्षा के संदर्भ में ये भी कहा कि स्त्रियों कोऐसी शिक्षा दी जाये जिससे उनका चरित्र सबल बने। शिक्षा का दायित्व शुद्ध, चरित्रवान, सुशिक्षित और आदर्श ब्रह्मचारियों को सौपने को कहा। वो सच्चरित्र, निष्ठावान, दयावान उपदेशिकाओं द्वारा देश में स्त्री–शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार चाहते थे। वे स्त्रियों को त्याग की भी शिक्षा देने के पक्षधर थे इसके साथ ही साथ स्त्रियों को आत्मरक्षा के उपाय भी सिखायें जाये। संघमित्रा अहिल्या, मीराबाई, झांसी की रानी के आदर्शों को अपनाकर स्त्रियों को पवित्रता, निर्भयता, ईश्वर परायणता के गुणों का अभ्यास करना चाहिये।

स्पष्ट है कि स्वामी जी ने पुरूषों के ही समान स्त्रियों को भी शिक्षा प्रदान करने के लिये कहा। आज देश को समृद्धिशाली बनाने के लिये जितना पुरूषों को शिक्षा की आवश्यकता है उससे कहीं ज्यादा स्त्रियों को, क्योंकि स्त्रियाँ ही वो आधार स्तम्भ हैं जो राष्ट्र को सम्पन्न एवं शक्तिशाली बना सकती हैं। स्वामी जी ने अपने शब्दों में कहा था–

''स्त्रियों को शिक्षित करों, राष्ट्र का कल्याण तभी होगा।''

निष्कर्ष

आज उच्च आदर्शों से युक्त और अत्यधिक बोझों से दबे हम भारतीयों के लिये उपर्युक्त शिक्षा प्रणाली का रूप निर्धारित करना है। छोटे मोटे सुधारों के होते हुये भी भारत की शिक्षा प्रणाली आज भी अरचनात्मक और मंत्रवत् है जिससे न तो विद्यार्थी के ही व्यक्तित्व का पूर्ण विकास होता है और न ही समाज का। भारत के सुधी विचारकों और शिक्षा–विशारदों के लिये यह विषय अत्यधिक चिन्ताजनक एवं विचारणीय है। ऐसी स्थिति में स्वामी विवेकानन्द ने स्वयं प्रबुद्ध होकर मानवजाति के उच्चतर भविष्य का मार्गदर्शन किया एवं भारत भारती को अपने शैक्षिक विचारों से जाग्रत होने का संदेश दिया।

स्वामी जी का शैक्षिक–दर्शन जगत के लिये अमूल्य है जिसने मानव के सर्वांगीण जीवन गठन में अनुपम शक्ति प्रदान की है। उनके शैक्षिक विचारों से यह

बात पूर्णतया स्पष्ट है कि वे आदर्शवादी होते हुये भी आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं एवं वास्तविकताओं के प्रति सजग एवं जागरूक थे।

शिक्षा के विभिन्न आयामों के सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुये इन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि चिन्तन और क्रिया में किसी प्रकार का विरोध नहीं है। दूसरे शब्दों में ज्ञान, भक्ति और कर्म का पारस्परिक सम्बन्ध है। वो ऐसी शिक्षा पर बल देते थे जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बन सके।

उनके द्वारा स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल एवं जनसाधारण शिक्षा सम्बन्धी विचार भारत की राष्ट्रोन्नति एवं शिक्षान्नोति का मार्ग प्रशस्त करते है। अन्ततोगत्वा ये कहा जा सकता है कि भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन में तालमेल बैठाकर, शिक्षा का सही उद्देश्य निर्धारित कर इन्होंने आधुनिक शिक्षा को नयी दिशा प्रदान की है। स्वामी जी द्वारा निर्धारित शिक्षा के सिद्धान्त हमारे देश और इस काल के लिये ही नहीं अपितु हर क्षेत्र और काल में सही उतरने वाले हैं। उन्हें सार्वभौमिक और सार्वजनिक सिद्धान्त कहा जा सकता है। इनके शैक्षिक विचार अपने जीवन्त रूप में आज भी विद्यमान है तथा उसमें आध्यात्मिकता एवं भौतिकता का सुन्दर समन्वय है। इनके द्वारा बोऐ गये बीज ही इनके शैक्षिक विचाररूपी फसल के आधार हैं तथा एक शिक्षित स्वस्थ समाज का दर्पण हैं। इनके शैक्षिक विचार इन्हें वास्तव में भविष्य दृष्टा एवं युग निर्माता के रूप में खड़ा करते हैं। इसका आभास गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा रोम्यारोलां को लिखे एक वाक्य से होता है–

''अगर तुम भारत के विषय में जानना चाहते हो तो विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन का अध्ययन करो।''

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *दास, त्रिलोचन. (1989) सोशल फिलासफी ऑफ स्वामी विवेकानन्द. मेरठ प्रकाशन, मेरठ.*
2. *जोशी, शान्ति. (1972). समसामयिक भारतीय दार्शनिक. कलकत्ता प्रकाशन, कोलकाता.*
3. *सेन, गौतम. (1975). दि माइंड आफ स्वामी विवेकानन्द. धन्तौली प्रकाशन, धन्तौली.*
4. *मजूमदार, अ0कु0. (1972). अन्डर स्टैंडिंग विवेकानन्द. गर्वनमेन्ट आफ इण्डिया, नयी दिल्ली.*
5. *पाण्डेय, रा0श0. (1991). ए सर्वे आफ एजूकेशनल थाट. इलाहाबाद प्रकाशन, इलाहाबाद.*
6. *भास्करानन्द. (1987). विवेकानन्द संचयन. मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.*
7. *अपूर्णानन्द. (1971). स्वामी विवेकानन्द, संक्षिप्त जीवनी तथा विचार. मेरठ प्रकाशन, मेरठ.*
8. *हुसैन, एम0. (1973). एजूकेशनल फिलासफी ऑफ विवेकानन्द. अलीगढ़ विश्वविद्यालय.*
9. *सिंह, एस0. (1961). स्टडी आफ फिलासफिकल थाट्स ऑफ विवेकानन्द एण्ड स्वामी तीर्थंकर. बम्बई विश्वविद्यालय.*
10. *विवेक ज्योति. (1986). राम कृष्ण मिशन मठ, रायपुर.*
11. *सबके स्वामी जी. (1991). कलकत्ता प्रकाशन, कलकत्ता.*
12. *दत्ता, टी0एस0. (1978). ए स्टडी ऑफ फिलासफी ऑफ स्वामी विवेकानन्द विद् रिफरेन्स आफ अद्वैत वेदान्त एण्ड ग्रेट यूनीवर्सल हार्ट आफ बुद्ध. गौहाटी विश्वविद्यालय.*
13. *रोम्या रोलां. (2012). विवेकानन्द की जीवनी. अद्वैत आश्रम, चम्पावत.*